मूलगन्धकुटी विहार के चित्रों

का

संक्षिप्त-परिचय

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

मूल्य एक आना

प्रस्तावना

आज से कोई ४५ वर्ष पहले, जब श्रद्धेय श्री देवमित्र धर्मपाल, यहां सारनाथ आये थे उस समय यहां श्री अनागारिक के ही शब्दों में "सूअर चरते थे"। उन्हीं के अनेक वर्षों के दृढ़ अध्यवसाय व तपस्या का फल है कि हम आज यहां सारनाथ में इस सुन्दर मूलगन्धकुटी विहार को देखते हैं। हर्ष का विषय है कि उन्होंने जिस महान मन्दिर का निर्माण प्रारम्भ किया था उसे वे अपने जीवन काल में ही समाप्त देख सके।

सन् १९३१ में जिस समय श्री बी० एल० ब्राउटन उपसभापति, ब्रिटिश महाबोधि सभा, मूलगन्धकुटी विहार के उद्घाटनोत्सव पर यहां आये थे तब उन्होंने मुझे वचन दिया था कि वे अपनी माता की स्मृति में मूलगन्धकुटी विहार की दीवारों पर अजन्ता के ढंग की चित्रावली के लिये १००००) देंगे। श्री ब्राउटन की इच्छा और आग्रह था कि एक बौद्ध मन्दिर में जो चित्र बनें वे एक बौद्ध चित्रकार की ही कृति हों। १९३३ से प्रारम्भकर श्री नोसु और उनके सहकारी श्री कवाई, जापानी चित्रकार १९३६ मार्च तक अनन्त परिश्रम तथा श्रद्धा पूर्वक कार्य करके इसी सितम्बर महीने में अपने देश लौट गये। पूर्व और पाश्चात्य के जितने भी लोगों ने इन चित्रों को देखा है सभी ने मुक्त कण्ठ से इनकी प्रशंसा की है।

जिस दिन से ये चित्र बनकर समाप्त हुए हैं उसी दिन से इस बात की आवश्यकता थी कि मन्दिर के दर्शनार्थ आने वाले हजारों यात्रियों के लिये कोई अधिकारी विद्वान इन चित्रों का एक संक्षिप्त-परिचय लिख दें। मैं समझता था कि भदन्त आनन्द कौसल्यायन जितनी योग्यता से इस कार्य को कर सकेंगे वैसा शायद ही कोई दूसरा कर सके। हर्ष का विषय है कि उन्होंने इस कार्य को अपने जिम्मे लिया और सुचारु ढंग से पूरा कर दिया।

मूलगन्धकुटी विहार के चित्रों का यह परिचय जितना सरस है उतना ही सरल तथा प्रामाणिक है। आशा है चित्रों के प्रेमी सज्जन इसे अवश्य अपनायेंगे।

सारनाथ, बनारस। **देवप्रिय वलिसिंह,**

ता० ११ नवम्बर १९३९ *प्रधान मन्त्री, महाबोधी सभा*

दर्शक—भन्ते ! * क्या मन्दिर में दर्शन करने की आज्ञा है ?

भिक्षु—यहां किसी को मनाही नहीं है। जूता बाहर उतार दीजिए और अपना छाता तथा लकड़ी यहां रख कर चले आइये।

दर्शक—आहा, क्या ही शान्त जगह है। (आगे बढ़कर भगवान् बुद्ध को नमस्कार करता है)। भन्ते ! क्या यह मूर्ति सोने की है ?

भिक्षु—नहीं, मूर्ति तो पत्थर की है, उसपर सोने का पानी फिरा है।

दर्शक—भन्ते ! इस मूर्ति को किसने बनाया है ?

भिक्षु—आप यदि सारनाथ म्युजियम में गये होंगे तो आपने वहां गुप्त-काल की अत्यन्त ही सुन्दर बुद्ध-मूर्ति देखी होगी, यह जयपुर के शिल्पियों की बनाई हुई उसी की नकल है। और इस पर यह जो सोने का रंग है, यह दार्जिलिंग के श्री० लेडन ला ने अपनी श्रद्धा से फिरवाया है।

दर्शक—भन्ते ! भगवान की पूजा किस समय होती है ?

---

* भन्ते=स्वामिन्।

भिक्षु—अन्य अनेक मन्दिरों की तरह यहां लम्बी चौड़ी पूजा नहीं होती, शाम को हम सब भिक्षु इकट्ठे होकर पुष्प, धूप, दीप से भगवान की पूजा करते हैं और उस समय पाली-सूत्रों का पाठ होता है।

दर्शक—भन्ते ! क्या बाहर के लोग भी उस समय उपस्थित हो सकते हैं ?

भिक्षु—हां प्रसन्नता पूर्वक !

दर्शक—पूजा ठीक किस समय होती है ? हम उसमें शामिल होने के लिये बनारस से आना चाहते हैं।

भिक्षु—ऋतु परिवर्तन के साथ पूजा का समय कुछ कुछ बदलता रहता है। प्रायः कोई सात बजे शाम को होती है।

दर्शक—भन्ते ! आपका समय तो कुछ खर्च होगा, लेकिन बड़ी कृपा हो यदि आप हमें इन चित्रों का कुछ संक्षिप्त परिचय दे सकें।

भिक्षु—आइये, तो एक तरफ से आरम्भ करें। (भिक्षु और दर्शकगण पूर्व दिशा के दरवाजे की तरफ के चित्र के पास जाते हैं)।

भिक्षु—देखिये ! यही पहला चित्र है। इसमें बोधिसत्व की माता महामाया देवी सोई हुई हैं और उनको स्वप्न आ रहा है कि मानो एक सफेद हाथी उनकी कोख में प्रवेश कर रहा है। चित्रकार ने चित्रकला के नियम के अनुसार स्वप्न के हाथी को ऊपर की ओर दिखाया है।

दर्शक—भन्ते ! बोधिसत्व, यह शब्द हमने पहले भी सुना है किसे कहते हैं ?

भिक्षु—सिद्धार्थ कुमार जब तक 'बुद्ध' नहीं हुए थे, तब तक अपने इस जन्म में, और इसके पहले के भी जन्म में वह बोधिसत्व कहलाते थे। बोधिसत्व का शब्दार्थ है बुद्धत्व के लिये प्रयत्नशील। इस चित्र में यह जो ऊपर पद्मासन लगाये बैठे हैं, यह बोधिसत्व ही हैं। इस पृथ्वी पर सिद्धार्थ कुमार के रूप में पैदा होने से पूर्व बोधिसत्व त्रयोस्त्रिंश लोक (स्वर्ग) में रहते थे। वहीं से महामाया देवी के गर्भ में आये।

दर्शक—तो आपके यहां भी जैसे हिन्दू-धर्म में अवतार धारण करना होता है, वैसे है।

भिक्षु—नहीं अवतार-वाद से यह बात बिलकुल भिन्न है। अवतार-वाद के अनुसार परमात्मा जो कि हर तरह से सम्पूर्ण है राम, कृष्ण आदि बनकर असम्पूर्ण मनुष्य के रूप में पृथ्वी पर उतरता है। लेकिन यहां बोधिसत्व अपने प्रयत्न से अपने अज्ञान और चित्तमलों का नाशकर 'बुद्ध' बनने के लिये मनुष्य रूप धारण करता है।

दर्शक—तब तो हम सभी बोधिसत्व हो सकते हैं ?

भिक्षु—हां, यदि हम बुद्ध बनने के लिये प्रयत्न शील हैं, तो हम अपने को अवश्य बोधिसत्व कह सकते हैं। बुद्ध-धर्म

यह नहीं मानता कि आखरी 'बुद्ध' हो चुके, अब कोई बुद्ध ही नहीं होगा।

दर्शक—और यह जो लोग हाथ जोड़े खड़े हैं, यह कौन हैं ?

भिक्षु—यह देवता-गण हैं जो बोधिसत्व से प्रार्थना कर रहे हैं कि आप शीघ्र पृथ्वी पर जन्म धारण करें, बुद्ध बनें और संसार का कल्याण करें।

दर्शक—और यह जो नीचे का चित्र ?

भिक्षु—पहले आप साथ वाला, यह दरवाजे के ऊपर का चित्र देखें। महामाया देवी की इच्छा थी कि वह अपने मायके चली जावें और वहीं उनको सन्तान हो। राजा शुद्धोदन ने सब इन्तजाम करवा दिया! जिस समय वह कपिलवस्तु और देवदह के बीच में जा रही थीं, लुम्बिनी बन में पहुँचने पर उनको प्रसव-वेदना हुई। वहीं तम्बू लगवा दिये गये। महामाया देवी साखू-वृक्ष की डाल पकड़े खड़ी हैं। उनको पुत्र उत्पन्न हुआ है। अलौकिक बालक, कहते हैं पैदा होते ही सात कदम चला था। चित्रकार ने उसे कंवल के सात फूलों पर चलाया है। और वह जो हाथ में माला तथा कपड़ा लिये कुमार की वन्दना कर रही हैं, यह रानी महा माया की बांदियां हैं। और यह जिसने अपने सिर के बाल ही बिछा दिए हैं, उसके आत्म समर्पण का क्या कहना! कहिए इस चित्र में चित्रकार ने कलम तोड़ दी है या नहीं ?

दर्शक—सचमुच, यहां तो कमाल कर दिया है। अजन्ता के चित्र याद आते हैं।

भिक्षु—अच्छा, अब आप अपने नीचे के चित्र को देखें। यह जो सिद्धार्थ कुमार को हाथों पर लिये बैठे हैं यह कालदेवल ऋषि हैं। कुमार की उत्पत्ति की खबर सुनकर उसे देखने आये हैं। इन्हें अपने योग-बल से मालूम हो गया था कि भावी-बुद्ध पैदा हो गये हैं। इसी लिये, कहते हैं ज्यों ही इन्होंने कुमार को देखा त्यों ही पहले तो यह प्रसन्न हुए, पीछे रो पड़े। राजा शुद्धोदन ने पूछा—महाराज ! आप पहले तो प्रसन्न हुए फिर रो क्यों पड़े? ऋषिवर बोले—प्रसन्न तो मैं इसलिये हुआ कि मेरा सौभाग्य है कि मुझे भावी-बुद्ध के दर्शन हो गये और दुखी इसलिये कि जिस समय यह बुद्ध होंगे, उस समय तक मैं जीवित न रहूँगा। राजा को डर था कि कुमार पर कोई विपत्ति तो नहीं आने वाली। ऋषि के इन शब्दों से राजा का भय शान्त हुआ।

दर्शक—और यह तो कुमार की पैदाइश की खुशी में खैरात बँट रही होगी? वाह रे चित्रकार, वह लड़का कैसे हाथ फैलाये खड़ा है।

भिक्षु—अब इधर आइये, यह देखिए, अगला चित्र। यह जो ऊपर हल चला रहे हैं, यह सिद्धार्थकुमार के पिता राजा शुद्धोदन हैं और वृक्ष के नीचे ध्यान लगाये बैठे हैं स्वयं सिद्धार्थ-कुमार। उन दिनों कपिलवस्तु में कृषि का एक वार्षिक उत्सव हुआ करता था, जिसमें राजा स्वयं अपने हाथ से हल चलाते थे। स्याम में आजकल भी इस प्रकार का उत्सव होता है। राजा उत्सव देखने के लिए कुमार को भी अपने साथ

ले गये। जिस समय राजा हल चलाने में तथा अन्य लोग उत्सव देखने में मस्त थे, सिद्धार्थ-कुमार वृक्ष की छांह में जा बैठे और वहां ध्यानावस्थित होकर कुछ विचार करने लगे।

दर्शक—यह नीचे का चित्र खास चित्र है, इसे मैं कुछ-कुछ समझता हूँ।

भिक्षु—हां, यह इस तरफ एक बूढ़ा जा रहा है, एक रोगी है, एक मुर्दा ले जाया जा रहा है। इन्हीं दृश्यों को देखकर सिद्धार्थ कुमार को संसार से अरुचि हुई थी। वह सोचने लगा था कि क्या है यह संसार जिसमें सभी मनुष्यों को पैदा होना बूढ़ा होना, रोगी होना तथा मरना पड़ता है !!! कोई भी तो इस बन्धन से मुक्त नहीं होता। वह इस चिन्ता में था कि एक दिन उसे एक परिव्राजक दिखाई दिया जिससे कुछ बात चीत करने पर उसे सूझा कि उसे भी गृह त्याग कर सत्य और शान्ति की खोज में घर से निकलना चाहिये। देखिये रात का समय है, यशोधरा देवी अपने पलंग पर सोई है; साथ में उसका नव-जात पुत्र राहुल है। बांदियां जो गाना बजाना करके रानी का मन वहलाती रही थीं, वह भी थककर सो गई हैं। सिद्धार्थ कुमार दरवाजे पर खड़े हैं। वह आज रात को घर छोड़ देने का निश्चय किये हुए हैं, लेकिन जाने से पहले एक बार अपने राहुल को गोद में लेकर चूम लेना चाहते हैं। अब राहुल अपनी मां के पास सोया हुआ है, उसे उठाकर चूमने में राहुल-जननी के जागने का भय है। क्या करे और क्या न करे, बड़ी कठिनाई में है। देखिए,

सिद्धार्थ-कुमार के हृदय की यह उलझन उसके मुंह से साफ साफ प्रकट हो रही है। अत्यन्त पशोपेश के बाद सिद्धार्थ अपने राहुल को, अपनी यशोधरा को और उसके साथ ही पास के महल में लेटे अपने पिता को भी सोता छोड़ उसी रात को चुपके से गृह-त्याग कर देता है। इसे हम सिद्धार्थ कुमार का महाभिनिष्क्रमण कहते हैं। इस समय सिद्धार्थ की आयु कोई २६ वर्ष की थी।

दर्शक—तो यह घोड़े पर सिद्धार्थ ही चढ़े जा रहे होंगे।

भिक्षु—हां, यह अपने कन्थक नाम के घोड़े पर सिद्धार्थ ही जा रहे हैं। पीछे उनका साथी है, छन्द। आधी रात है। आकाश में तारे चमक रहे हैं। सिद्धार्थ जल्दी-जल्दी जा रहे हैं कि पौ फटने से पहले पहले कपिलवस्तु की सीमा के बाहर निकल जायें।

दर्शक—और यह आगे कौन हैं ?

भिक्षु—आगे भी वही हैं। सिद्धार्थ जब अनोमा नदी के उस पार पहुंचते हैं, तो छन्तक को वापिस कपिलवस्तु लौटा देते हैं और कन्थक (कहते हैं) कुमार के वियोग के शोक में वहीं गिर कर अपने प्राण दे देता है। सिद्धार्थ अपने राज-कीय भेष को छोड़कर संन्यासी के वस्त्र पहन लेते हैं।

दर्शक—तो वह अनोमा नदी इसमें कहां है ?

भिक्षु—अनोमा नदी, इन चित्रों में नहीं दिखाई गई है। सभी बातें कैसे दिखाई जा सकती हैं ?

दर्शक—तो फिर सिद्धार्थ कहां जाते हैं ?

भिक्षु—अब सिद्धार्थ अपने समय के प्रसिद्ध २ संन्यासियों, योगियों के पास जाकर उनसे जो भी ज्ञान मिल सकता है, उसे प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। देखिये ऊपर के चित्र में वह आलारकालाम नामक एक ऋषि के पास खड़े हैं और उनसे प्रश्न पूछ रहे हैं।

दर्शक—और यह नीचे ?

भिक्षु—जब सिद्धार्थ को आलारकालाम आदि ऋषियों से विशेष ज्ञान प्राप्त न हो सका तो गया चले गये और उस समय के विचारानुसार उन्होंने तपस्या करनी शुरू की। भोजन की मात्रा कम करते-करते इतनी कम कर दी कि उनके बदन में जरा भी बल न रह गया। एक दिन वह बुरी तरह चक्कर खाकर जमीन पर गिर पड़े। तब उन्होंने सोचा कि एक मनुष्य जितनी तपस्या कर सकता है, उतनी तपस्या मैंने की। इससे ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। अब इससे अधिक तपस्या करने से ज्ञान-प्राप्ति तो एक ओर शरीर से भी हाथ धोना पड़ेगा। यह सोच उन्होंने उस दिन सुजाता की दी हुई खीर ग्रहण कर ली। यह देखिये सुजाता किस अनुपम श्रद्धा और नम्रता से तपस्वी सिद्धार्थ को सोने के कटोरे में खीर दे रही है।

दर्शक—यह सुजाता कौन थी।

भिक्षु—सुजाता उस समय के एक बड़े जमींदार की लड़की थी। उसने वृक्ष के देवता से मिन्नत मान रक्खी थी कि यदि उसको पुत्र होगा तो वह सोने के बरतन में खीर चढ़ायेगी। उसकी मनोवाञ्छा पूर्ण हुई। वह सोने के बरतन में खीर लाई

है और अत्यन्त प्रसन्न है क्योंकि वह समझती है कि उसकी खीर ग्रहण करने के लिए देवता ने साक्षात रूप धारण किया है।

दर्शक—और यह चार पांच साधू कौन हैं जो वृक्ष की आड़ से टुकुर टुकुर देख रहे हैं?

भिक्षु—यह पांच परिव्राजक हैं जो सिद्धार्थ की तपस्या के दिनों में उनकी बड़ी सेवा करते रहे। लेकिन इस समय यह देखकर कि सिद्धार्थ सुजाता की खीर ग्रहण करने जा रहे हैं, उन्हें मार्ग-भ्रष्ट हुआ समझ उनकी ओर बड़ी खेद की दृष्टि से देख रहे हैं।

दर्शक—हां सचमुच, एक जो वह वृक्ष की आड़ में बैठा है, वह तो खास तौर पर बिगड़ा हुआ मालूम देता है।

भिक्षु—और आपने उन लंगूरों और पक्षियों को भी देखा? कैसे स्वाभाविक बने हैं?

दर्शक—वाह, लंगूर अपने बच्चे को कैसे चिपटाये जा रहा है।

भिक्षु—आइये, अब इस चित्र को देखिए। यह वह विश्व-विख्यात बोधि-वृक्ष है, जिसकी छाया के नीचे बैठ कर सिद्धार्थ ने बुद्धत्व प्राप्त किया था। जब सिद्धार्थ कुमार ने देखा कि तरह तरह की तपस्याओं, शारीरिक क्लेशों से उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ, तब वह आकर इस बोधि-वृक्ष के नीचे बैठ गये और संकल्प किया कि "चाहे मेरी हड्डियां ही क्यों न बाकी रह जायें, चाहे मेरा रक्त मांस सब सूख जाये, लेकिन जबतक

बुद्धत्व को प्राप्त नहीं कर लूंगा, तबतक इस आसन को नहीं छोड़ूँगा।" आप श्रोतिय नामक घसियारे की दी हुई कुछ थोड़ी सी घास का आसन बनाकर उसी पर बैठे हैं। चारों ओर से यह जो बहुत सारे भूत पिशाच दिखाये गये हैं, जो तरह तरह से आक्रमण कर रहे हैं, यह सब चित्त की भय, क्रोध, मोह, लोभ आदि कलुषित वृत्तियों के अवतार हैं। इनका सेनापति है काम-देव जिसे मार कहते हैं। उसने अपनी तीन लड़कियों को भी भेजा है कि वह किसी तरह कुमार के मन को डिगा दें। मार के सब प्रयत्न असफल हुए हैं। वह सिद्धार्थ को उसके आसन से तनिक भी नहीं हिला सका। इसीलिए देखिये विचारा एक ओर बैठा लज्जा से पशेमान है और अपनी तलवार तोड़ने जा रहे हैं।

वैशाख पूर्णिमा को रात को सिद्धार्थ उस वृक्ष के नीचे बुद्धत्व प्राप्त करते हैं, और तभी से हम उन्हें भगवान् बुद्ध कहना प्रारम्भ करते हैं।

दर्शक—यह बोधि-वृक्ष कहां था ?

भिक्षु—यह बोधि-वृक्ष गया स्टेशन से कोई ७ मील की दूरी पर बुद्ध गया में प्रसिद्ध बुद्धगया मन्दिर के पश्चिम की ओर था। महाराज अशोक के समय उनकी पुत्री भिक्षुणी संघमित्रा उस बोधिवृक्ष की शाखा सिंहल-द्वीप ले गई थी, जहां वह अनुराधपुर में एक विशाल वृक्ष के रूप में अभी भी

विद्यमान है। १९३१ में उसी वृक्ष की एक शाखा लाकर यहां सारनाथ में मूलगन्धकुटी विहार के पूर्व तरफ लगाई गई है।

दर्शक—तो बुद्ध गया भी आप लोगों का बड़ा तीर्थ होगा।

भिक्षु—वही तो हमारा सर्व-प्रधान तीर्थ है। लेकिन अत्यन्त खेद के साथ कहना पड़ता है कि वहां जो हमारा बुद्ध गया मन्दिर है, उसपर एक शैव महन्त ने अधिकार कर रक्खा है। श्री अनागारिक धर्मपाल ने अपने जीवन भर इस बात का प्रयत्न किया कि किसी प्रकार हमारा मन्दिर हमारे हाथ में आ जाये। अनेक कारणों से वह असफल रहे। लेकिन मन्दिर के लिये हमारा आग्रह है, और आन्दोलन जारी है और हम उसे लेकर रहेंगे।

दर्शक—हां, यह तो सचमुच बड़ा अन्याय है।

भिक्षु—आइये, देखिये हम बुद्ध गया से सारनाथ चले आये। यह जो ऊपर का चित्र है, जिसमें भगवान बुद्ध खड़े हैं और एक भिक्षु उनका पात्र ले रहा है तथा दूसरा पांव धोने जा रहा है, सारनाथ का ही चित्र है। बुद्धगया में बुद्धत्व (ज्ञान) प्राप्त करके भगवान बुद्ध जब लोगों के कल्याण के लिये उसका उपदेश करने निकले, तब वह सर्व प्रथम सारनाथ में ही आये थे। यह जो पांच भिक्षु भगवान के सामने हाथ जोड़े खड़े हैं यह वही पांच जने हैं जो उस चित्र में भगवान बुद्ध को बड़ी सन्देह की दृष्टि से देख रहे हैं। इन्हीं को भगवान बुद्ध ने सर्व प्रथम उपदेश दिया था। भगवान ने कहा था—भिक्षु को

चाहिये कि वह दोनों बातों से बचे, न तो "तपस्या" के नाम से अपने शरीर को व्यर्थ का कष्ट दे और न काम-भोग के हानिकर जीवन में पड़े। इन दोनों से बचते हुए सरल, सच्चा, लोक के लिए कल्याणकारी जीवन व्यतीत करे।

दर्शक—क्या 'सारनाथ' को सारनाथ कहने को कोई खास वजह है ?

भिक्षु—हां, कहते हैं कि भगवान बुद्ध जिस समय बुद्ध नहीं हुए थे, तब अपने एक पूर्व के जन्म में हिरणों के नायक बनकर पैदा हुए थे। अपने उस जन्म में उन्होंने अनेक प्राणियों के, विशेष रूप से हिरणों के प्राण बचाये थे। इसलिये उनका नाम पड़ा शारङ्गनाथ। शारङ्ग कहते हैं संस्कृत में हिरण को। शारङ्गनाथ से बिगड़ते २ सारनाथ हो गया।

दर्शक—यह नीचे का चित्र ?

भिक्षु—इस चित्र में भगवान् बुद्ध वेलुवनाराम (राजगृह) में राजा बिम्बसार सहित गृहस्थ और प्रव्रजितों की एक परिषद् को उपदेश दे रहे हैं। आकाश में देवतागण धर्म-चक्र को पकड़े हुए हैं।

दर्शक—यह कोने का चित्र ?

भिक्षु—यह अनाथपिण्डक के जेतवनाराम के निर्माण का चित्र है। अनाथपिंडक अपने समय का एक बड़ा भारी सेठ था। वह जो हाथ में जलपात्र लिए खड़ा है वह अनाथपिंडक ही है, उसकी इच्छा हुई कि भगवान् बुद्ध और भिक्षु

संघ के निवास के लिए एक सुन्दर आराम बनवा दे। जमीन खरीदने के लिये उसने जेत कुमार से पूछा। जेत कुमार या तो जमीन देना न चाहता था, या बहुत धन कमाना चाहता था। उसने कहा पृथ्वी पर अशर्फियां बिछाकर उतनी कीमत देने पर भी मैं जमीन न दूंगा। अनाथ पिंडक पृथ्वी पर अशर्फियां बिछाकर ही जमीन ले रहा है। देखिये यह जो बैल गाड़ी खड़ी है, इसी गाड़ी पर अशर्फियां लदकर आई हैं। दो आदमी जमीन पर अशर्फियां बिछा रहे हैं। अशर्फियां कम पड़ जाती हैं। अनाथपिंडक अशर्फियां लाने के लिए गाड़ी भेजना चाहता है। जेत कुमार कहता है बस! अब और अशर्फियां न मंगाओ। जिस आराम के बनवाने के लिये तुम इतना खर्च कर रहे हो, उनके लिए शेष जमीन मैं अपनी ओर से देता हूँ। वर्तमान बलरामपुर (जि० गोंडा) से ९, १० मील के फासले पर करोड़ों की लागत से यह आराम बनवाया गया। इसका नाम पड़ा अनाथपिण्डक का जेतवनाराम।

दर्शक—यह बैल खूब बना है। मालूम होता है अभी गर्दन हिलाएगा।

भिक्षु—सचमुच, अब इधर दूसरी दीवार पर आइये। यह देखिये, तिष्य नामक एक भिक्षु बुरी तरह बीमार था। जिस विहार में रहता था वहां के भिक्षु उसकी सेवा की ओर से उदासीन थे। भगवान् ने उस भिक्षु को उठवा कर उस साफ सुथरी चारपाई पर लिटवाया है और अपने हाथ से

उसकी सेवा कर रहे हैं। भगवान बुद्ध की शिक्षा है "जो रोगी की सेवा करता है वह मेरी सेवा करता है"

दर्शक—यह ऊपर के अगले चित्र में भगवान् बुद्ध के सामने दो जने कौन खड़े हैं? मालूम होता है कोई राजा हैं।

भिक्षु—हां, आप ऊपर देखते हैं कि पानी की नहर बह रही है। इसी नहर के लिये कोलिय और साक्य के आदमियों में झगड़ा हो गया था, एक कहते थे इस पानी से हमारे खेत सींचे जायंगे और दूसरे कहते थे हमारे। लड़ाई बढ़ते-बढ़ते दोनों देशके राजाओं के बीच में ठन गई। भगवान् बुद्ध ने देखा कि पानी के लिए खून बहने जा रहा है। दया से प्रेरित होकर भगवान जहां दोनों सेनायें युद्ध के लिए प्रस्तुत थीं वहां गये और दोनों राजाओं को सम्बोधित करके पूछा! "जिस पानी के लिए तुम लड़ने जा रहे हो, उसका मूल्य अधिक है, वा जो खून बहाने जा रहे हो, उसका मूल्य"? दोनों राजाओं को बात लग गई और युद्ध होता होता रुक गया।

दर्शक—और यह नीचेवाला चित्र?

भिक्षु—यह कपिल वस्तु का चित्र है। अपने घर को छोड़े भगवान् बुद्ध को कई वर्ष हो गये। वे स्वयं घर न जाते थे, लेकिन उनकी ख्याति बराबर घर पहुँच रही थी। राजा शुद्धो-दन को अपने पुत्र को देखने की उत्कट इच्छा हुई। उसने एक एक करके कई आदमी भगवान बुद्ध को लिवा लाने के लिये भेजे, लेकिन कोई लौट कर न आया। जो जाता शिष्य बन कर

वहीं रह जाता। अन्त में भगवान् बुद्ध का एक लंगोटिया यार लाल उदायी, जो इस समय राजा शुद्धोदन का मन्त्री था, भगवान् बुद्ध को कपिलवस्तु लिवा लाने में सफल हुआ। राजा शुद्धोदन को देखिये, उनकी कितने दिनों की कितनी बड़ी अभिलाषा पूर्ण हुई है !!! राहुल कुमार थाल में कंवल फूल लिये है और स्वागत कर रहा है उनका, जो उसे सोता छोड़ गये थे।

दर्शक—और यह अगला चित्र तो बड़ा ही प्रभावोत्पादक है।

भिक्षु—इसे छोड़ दीजिये। पहले हम यह और आगे के चारों चित्रों को समाप्त कर लें, तब इसे अन्त में देखिये।

दर्शक—चलिये।

भिक्षु—यह आपको मालूम होगा कि सिद्धार्थ कुमार के जन्म के कुल छः सात दिन बाद ही उनकी माता महामाया देवी का देहान्त हो गया था। वह इस लोक से च्युत होकर स्वर्ग-लोक में उत्पन्न हुई थीं। भगवान् बुद्ध ने जहां संसार के इतने और प्राणियों को अमृत-दान दिया, वहां वह अपनी जननी को कब भूलने वाले थे ? उसे उपदेश देने के लिए उन्हें स्वर्ग-लोक जाना पड़ा। वे गये। ऊपर के चित्र में अपनी माता को उपदेश देने के अनन्तर वे स्वर्ग से नीचे उतर रहे हैं। आकाश से पृथ्वी तक स्वर्ण की सुन्दर सीढ़ियां लगी हैं। भगवान का यह स्वर्गारोहण और स्वर्ग अवतरण संकासय (मोटा, जिला आगरा से तीन चार मील की दूरी पर) में हुआ था।

दर्शक—यह नीचे का अत्यन्त भयानक चित्र किसका है ?

भिक्षु—यह अंगुलिमाल डाकू है, इसके गले में यह जो लाल लाल है, वह लोगों की कटी हुई अंगुलियों की माला है। इसका व्रत था कि मैं एक हजार लोगों को मार कर उनकी अंगुलियां की माला पहनूंगा। आज उसका आखरी हत्या का दिन है और यदि आज उसे उसकी अपनी माता भी मिल जायगी, तो वह उसे भी छोड़नेवाला नहीं। यह बुढ़िया उसकी माता ही है। भगवान् बुद्ध उस विचारी वुढ़िया की जान को तथा अंगुलिमाल को मातृ हत्या के महान् पातक से बचाने के लिए समय पर पहुँच जाते हैं। अंगुलिमाल उन्हें देखकर कहता है "कहां जाता है, ठहर जा।" भगवान बुद्ध कहते हैं "मैं ठहरा हुआ हूँ"। अंगुलिमाल गर्जता है "जा रहा है और कहता है ठहरा हुआ हूँ। श्रमन होकर झूठ बोलता है ?" भगवान् कहते हैं "अंगुलिमाल ! मैं पाप कर्म करने से ठहरा हुआ हूँ, मैं पाप कर्म करने से रुका हुआ हूँ।" कुछ वात चीत के अनन्तर अहिंसा हिंसा पर विजय पाती है।

दर्शक—और यह कोने में ऊपर कौन है जो किसी के कान में कुछ कह रहा है ?

भिक्षु—यह देवदत्त है जो भगवान बुद्ध का साला था। इसके हृदय में ऐसी ईर्ष्या की आग जल रही थी, इसके पाप के संस्कार इतने बलवान थे कि वह भगवान बुद्ध की अमृतवाणी से भी शान्त न हुए। इस चित्र में देवदत्त बैठा बिम्बिसार

के पुत्र अजातशत्रु को भगवान बुद्ध के विरुद्ध भड़का रहा है ?

दर्शक—और यह नीचे ?

भिक्षु—यह नीचे एक अछूत बालिका है। उसके पास घड़े में पानी है। आनन्द स्थविर को पानी की आवश्यकता है। उन्होंने पानी मांगा है। लड़की कहती है—मैं अस्पृश्य हूं। आनन्द कहते हैं "मुझे तेरी जात नहीं चाहिये, पानी चाहिये।" आग्रह करने पर अस्पृश्य बालिका पानी देने को राजी हो जाती है। देखिए इस चित्र में वह कैसे अपनी लज्जा और शील को बनाए रखकर पानी दे रही है, और दूसरी ओर आनन्द कैसे अपने शील और संयम का ध्यान रखकर पानी ले रहे हैं।

दर्शक—अब वह चित्र जो छूट गया है।

भिक्षु—इसे तो आप बहुत कुछ समझ ही गये होंगे। भगवान बुद्ध ४५ वर्षतक निरन्तर लोक-कल्याण में रत रह कर इस समय इन शाल वृक्षों के नीचे फिर कभी न उठने के लिये लेटे हैं। जिस प्रदीप ने इस लोक को आलोकित कर रक्खा था, वह बुझ रहा है, बुझ गया है। उनके शिष्य प्रव्रजित और गृहस्थ दोनों दो ओर बैठे हैं। जो अज्ञान रहित हो गये थे, जिनका मोह नष्ट हो गया था, वह तो शान्त चित्त हैं शेष सब दुखी हैं, शोक से विह्वल हो रहे हैं। इस कुत्ते के दुःख को जरा देखिए।

दर्शक— अन्य हत में त्रिशूलधारी साधू कौन हैं ? यह तो बुद्ध शिष्य नहीं मालूम होता ।

भिक्षु—इसका नाम है सुभद्र । शायद यह भगवान का अन्तिम शिष्य हुआ था । यह उस समय आया था जब भगवान महापरिनिर्वाण शैय्यापर लेटे हुए थे, और बड़े आग्रह पूर्वक इसने अपनी शंकायें निवृत्त की थीं ।

दर्शक—भगवान बुद्ध का परिनिर्वाण कहां हुआ था ?

भिक्षु—वह गोरखपुर से कोई १३ मील की दूरी पर वर्तमान माथाकुंवर (कुसीनगर) में हुआ था । वहां इस समय एक पुराना मन्दिर है और एक बड़ा सुन्दर परिनिर्वाण स्तूप ।

दर्शक—लुम्बिनी और बुद्धगया तो मैं हो आया हूँ । कुसीनगर भी जाऊंगा । आपको बड़ा कष्ट दिया । अब आज्ञा दीजिये । (प्रणाम करता है)

भिक्षु—सुखी रहो ।

मुद्रक—पं० गणेशप्रसाद शुक्ल, रामेश्वर प्रेस, बुलानाला, काशी ।